पूज्य लालचंदभाई का प्रवचन
सोनागिर, ता. ३०-४-१९८९
श्री समयसार, गाथा २२०-२२३, प्रवचन नंबर P21

समयसार की २२०, २२१, २२२, २२३, चार गाथा हैं। पेज २६६ है। उसकी टीका। यानि, प्रकरण ऐसा है कि एक द्रव्य, दूसरा द्रव्य के परिणाम में कोई फेरफ़ार करने की शक्ति, परद्रव्य में नहीं है। परद्रव्य मेरे परिणाम को फेरफ़ार कर देगा- ऐसी शंका नहीं करनी। ऐसी बात है। इस पर एक दृष्टांत देते है, दृष्टांत भी बढ़िया है।

जैसे यदि शंख परद्रव्य को भोगे, शंख जीव है। शंख नाम का जीव है। शंख का शरीर सफ़ेद होता है। **जैसे यदि शंख परद्रव्य को भोगे (खाए) तथापि उसका श्वेतपना अन्य के द्वारा काला नहीं किया जा सकता। क्योंकि पर अर्थात् परद्रव्य किसी द्रव्य को परभाव स्वरूप करने का निमित्त कारण नहीं हो सकता।** उपादान कारण तो नहीं हो सकता मगर निमित्त कारण का भी अभाव है। अपनी पर्याय पलटने में परपदार्थ तो कर्ता नहीं है, मगर निमित्त कारण भी नहीं है। पर्याय अपने आप पलटती है, तो परपदार्थ को उस टाइम निमित्त का आरोप आता है। निमित्त से उपादान की पर्याय नहीं पलटती है। उपादान की पर्याय अपने से पलटती है तब परपदार्थ को निमित्त कहा जाता है। यानि परपदार्थ अपना परिणाम में निमित्त कारण भी नहीं है। उपादान कारण नहीं है और परपदार्थ निमित्त कारण भी नहीं है। आहाहा! निमित्त कारण नहीं हो सकता।

निमित्त का अर्थ, कारण नहीं हो सकता। **इसी प्रकार यदि ज्ञानी परद्रव्य को भोगे तो भी उसका ज्ञान, अन्य के द्वारा अज्ञान नहीं किया जा सकता, क्योंकि पर अर्थात् परद्रव्य, किसी द्रव्य को परभाव स्वरूप करने का निमित्त नहीं हो सकता, इसलिए ज्ञानी को दूसरे के अपराध के निमित्त से बंध नहीं होता** आहाहा! अपने भाव से बंध होता है। निमित्त से बंध नहीं होता है। क्योंकि निमित्त से निरपेक्ष इधर उपादान की पर्याय होती है। वो पर्याय में निमित्त कारण है ही नहीं। पहले निरपेक्ष स्वभाव है।

जिसे आत्मज्ञान हो गया। आत्मज्ञानी पुरुष होता है, तो वो जिनागम का भी अभ्यास करता है और अन्यमत के शास्त्र आदि का भी अभ्यास करते हैं। समझे? जानने के लिए, खंडन के लिए, अपना ये सत्य है कि दूसरा सत्य है ऐसा दूसरे के साथ कभी वाद-विवाद होवे वो सब धर्म का भी अध्ययन करते हैं। तो बौद्धधर्म का शास्त्र, सांख्यमत का शास्त्र पढ़े तो इससे ज्ञान, अज्ञान हो जाता है- (ऐसी) शंका नहीं करना। ये ख्याल रखना कि ज्ञानी होने (के बाद) की बात है। होने के बाद की बात है। पहले जो तू पर(शास्त्र) का अभ्यास करे तो मर जायेगा।

यानि इधर तो ज्ञान की पर्याय प्रगट होने के बाद ज्ञानी को परपदार्थ के भोग से अपना ज्ञान च्युत नहीं होता है। ज्ञान चले जाता नहीं है। स्पर्श, रस, गंध, वर्ण, समझे? पाँच इंद्रिय का विषय उसके साथ आ

जावे संयोग में और उसका भोग भोगे, पाँच इंद्रियो को देखना, सूँघना, स्पर्श करना वगैरह तो तेरे परपदार्थ का अपराध से इधर अपराधी नहीं होगा तू। शंका नहीं करना। जो अपराध होता है अपने से अपराध होता है। और निरपराध परिणाम है वो भी अपने से स्वतंत्र होता है। परिणाम की शक्ति स्वतंत्र है। पर से अपराध भी नहीं और पर से निरपराध भी नहीं है। अपने स्वभाव को भूल गया, देह मेरा है माना तो अपराध हो गया। अपना आत्मा जान लिया, कि देह भिन्न, आत्मा भिन्न तो निरपराध हो गया।

बात ऐसी है कि सम्यग्दर्शन की बात कोई अपूर्वलब्धि है। सम्यग्दर्शन अपूर्वलब्धि है। सम्यग्दृष्टि स्वच्छंदी नहीं होता है। जब (तक) परमात्मा नहीं होता है तब तक उसको पाँच इंद्रियों के भोग का भाव आता है, उसको आत्मा से भिन्न जानता है। और जो परपदार्थ को भोगता है, वो मैं नहीं भोगता हूँ, दूसरी चीज़ भोगता है। भोग्यभाव दूसरा, भोगनेवाला दूसरा और उसे जाननेवाला जुदा।

एक बड़ा दृष्टांत देता हूँ, तो ख्याल आये। बहन ने कहा कि ज़रा स्पष्ट करना। तो यह भोग की प्रेरणा नहीं है, मगर पाठ है, दूसरा पदार्थ भोगने से अपराधी नहीं होता है। अपने स्वभाव को छोड़े तो अपराधी होता है। तो इधर से अविरत सम्यग्दृष्टि हो कि श्रावक हो कि मुनिराज, अभी पंचमकाल है ना, पंचमकाल में सीधा मोक्ष तो है नहीं। डाइरेक्ट नहीं है, इंडाइरेक्ट है। डाइरेक्ट मोक्ष इधर नहीं है। बराबर? अभी तो छठवाँ-सातवाँ गुणस्थान तक ही आता है। श्रेणी का काल नहीं है। यह काल का दोष नहीं है मगर ऐसी योग्यता जीव है कि ये योग्यता में छठवाँ-सातवाँ गुणस्थान तक आता है। उपशमश्रेणी कि क्षपकश्रेणी अभी नहीं है तो समझो जो ब्रह्मचारी मुनिराज ब्रह्मचारी है कि नहीं? भावलिंगी संत। उनका स्वर्गवास हो गया समझे? पंचम गुणस्थानवाला विरत श्रावक हो, चौथा गुणस्थानवाला अविरत सम्यग्दृष्टि हो, सम्यग्दृष्टि की भूमिका में इधर से स्वर्ग का ही बंध होता है। और नीचे का एक-दो-तीन जो है ना? स्वर्ग। उसमें जो जाता है वहाँ तो देवियाँ है। समझ गए।? वहाँ तो देवियाँ है। देव के साथ भोग भोगती हैं। तो निर्जरा होती है, बंध नहीं होता है। इसका अर्थ भोग की भावना नहीं करना। ये आत्मा की ताकत इतनी है भेदज्ञान की, कि एकत्वबुद्धि छूट गयी। परपदार्थ भोगे तो भी उसका बंध नहीं! शंका नहीं करनी कि उसको बंध हो जायेगा। आहाहा!

माघनंदी आचार्य को चारित्र छूट गया। चारित्र छोड़ा नहीं, उसने छूट गया योग्यता ऐसी। कुम्हार की लड़की के साथ शादी कर लिया। है कि नहीं प्रथमानुयोग में? वहाँ जाकर वो पति-पत्नीरूप भोग भोगता था तो भी बंध उसको नहीं था, एकत्वबुद्धि नहीं है उसको। भोग से हित नहीं मानता है। भोग का भाव भी पाप और भोग का निमित्त भी पाप, पाप को पाप जानता है, पुण्य को पुण्य जानता है, धर्म को धर्म जानता है। धर्मी को धर्मीरूप जानता है। ऐसा लैबॉरेटरी है। ज्ञान ऐसी लैबॉरेटरी है समझे? लैबॉरेटरी में जितना तत्व जिसरूप है उसका रिपोर्ट देता है। एनालिसिस होता है। ऐसी ज्ञानरूपी जो लैबॉरेटरी है उसमें क्षणिक विभाव, क्षणिक स्वभाव और त्रिकाल स्वभाव जुदे-जुदा। दर्पण में, ज्ञान दर्पण में दिखता है। एकताबुद्धि होती नहीं है और इसकी योग्यता है तो ऐसा भाव, अंदर में योग्यता पड़ी है तो भाव आता है। और ध्रुव में योग्यता होने पर भी उत्पाद-व्यय नहीं है और उत्पाद होता है तो भोग होता है और भोग करके निर्जरा हो जाती है।

समयसार के निर्जरा अधिकार की शुरुआत में लिया। समझ गये? ज्ञानी भोगता है बाद में निर्जरा

होती है। है ना पाठ। आहाहा! ये बात ऐसी है कि जीव को तत्वज्ञान का अभ्यास नहीं क्रियाकांड में पड़ गया! ये खाना, ये नहीं खाना, ऐसा खाना, ऐसा करना, आहाहा! छूताछूत, वैष्णव के माफ़िक़ समझे? आहाहा! आत्मा रह गया। उसमें परपदार्थ की सावधानी रखता है चौबीस घंटा। परपदार्थ में दोष नहीं आवे बराबर ध्यान रखता है, परपदार्थ में हो। बराबर ध्यान रखना। उसका ध्यान परपदार्थ में है। आहाहा!

मुमुक्षु:- अध्यवसान है। कहाँ से विचार आवे कि मैं पर का जानता नहीं हूँ।

उत्तर:- कहाँ से विचार आवे? विचार ही नहीं आता।

मुमुक्षु:- परद्रव्य से अपने में हित-अहित (होता है) ऐसा माने तो जानना कहाँ से बंद होवे। कर्ता-कर्म संबंध मानता है।

उत्तर:- क्योंकि उससे अपना हित मानता है। अपना हित-अहित पर से माना, आहाहा! अपने गुण से अपना हित, अपने दोष से अपना अहित, त्रिकाल स्वभाव तो हित-अहित से रहित, वो मैं हूँ। वहाँ कहाँ आता है? ये तो परपदार्थ का दोष देखते है। आहाहा! अलौकिक बात है।

और जब वही शंख। शंख वो ही लेना है, शंख दूसरा नहीं लेना। जब सफ़ेद शंख था, काला पदार्थ खाता था तो भी सफ़ेद रहता था। काला पदार्थ खाने से सफ़ेद काला नहीं होता है। काला पदार्थ खाया इसलिए काला हो गया ऐसा नहीं है। समझे? **और जब वही शंख परद्रव्य को भोगता हुआ, अथवा न भोगता हुआ**, दो बात अलौकिक है। भोगता हुआ कि न भोगता हुआ, भोगवे, या न भोगवे तो भी **श्वेतभाव को छोड़कर स्वयमेव कृष्णरूप परिणमित होता है**। अब परिणमन की शक्ति बताते है। आहाहा! शंख की परिणमन की योग्यता है। तो धोला (सफ़ेद), सफ़ेदरूप होता है, काला खाने पर काला नहीं होता है। और ये सफ़ेद शंख काला खाना छोड़ दिया, तो भी काला हो जाता है। काला खाना बंद किया तो भी काला बन जाता है। इसका ये हेतु है कि काला खाने से काला हुआ नहीं है और काला खाना छोड़ दिया और काला हो गया। अपनी पर्याय की योग्यता से सफ़ेद पर्याय का व्यय, काली पर्याय का उत्पाद ऐसा स्वयं होता है, अपनी योग्यता से पर्याय की योग्यता है। जीव तो वही का वही। सफ़ेद था तो भी वही जीव, काला हो गया! शरीर का कालापन हो, जीव नहीं, तो भी जीव तो वो ही का वो ही। यानि परपदार्थ खाने न खाने से, आहाहा! क्या करें? आहाहा!

परपदार्थ खाने जैसा है और नहीं खाने जैसा है, ऐसा भेद तो रहता है, मगर इधर श्रद्धा का दोष न आवे वो बात है!

इसकी छुट नहीं है कि कोई भी पदार्थ खाओ तुम, समझे? ऐसा नहीं है। एक पाँच उदंबर फल, और दारू आदि, मकार खाले ऐसी बात नहीं है,

आहाहा! ये बात कोई अलौकिक है। समझने जैसी बात है अंदर की। स्वच्छंदी होने की बात नहीं है। स्वतंत्र होने की बात है।

श्वेतभाव को छोड़कर स्वयमेव, खाता हो या न खाता हो स्वयमेव, पर्याय पलट जाती है। **स्वयमेव कृष्णरूप परिणमित हो जाती है, तब उसका श्वेतभाव स्वयंकृत कृष्णभाव होता है**। देखो! पर-कृत नहीं, स्वयंकृत। आहाहा! ये श्वेत पर्याय का व्यय और काली पर्याय का उत्पाद उसका कारण स्वयं पोते, स्वयंकृत है, निमित्तकृत नहीं है।

मुमुक्षु:- पर्याय का कर्ता पर्याय है ....

उत्तर:- पर्याय का कर्ता पर्याय है! इसलिए तेरहवीं गाथा बढ़िया से बढ़िया है। ये नवतत्व है भूतार्थनय से जान। ये भूतार्थनय से श्वेत, कृष्ण, ये भूतार्थनय से देख। ऐसा हुआ तो ऐसा हुआ, ऐसा नहीं है। आहाहा! ऐसा है तो ऐसा हो गया ऐसा नहीं है। आहाहा!

तेरहवीं गाथा के अंदर में बीज बो दिया कि सारे नवतत्व का मैं विवेचन करूँगा, कर्ता-कर्म, निमित्त-नैमित्तिक मैं कहूँगा समझे? मगर वो तत्व को तू भूतार्थनय से जानना, पहले। बाद में व्यवहारनय से जानो, पहले निरपेक्ष, बाद में सापेक्ष। ये पाठ है। खाता हो कि न खाता हो, स्वयं काला हो गया बोलो। काला पदार्थ खाता था तब सफ़ेद था काला नहीं हुआ और काला पदार्थ (खाना) छोड़ दिया, सफेद पदार्थ खाने लगा, सफ़ेद! तो भी काला हो गया। इसका अर्थ ये है कि परपदार्थ खाने से कोई लाभ-हानि नहीं हुई है। आहाहा!

मुमुक्षु:- अच्छा दृष्टांत है।

उत्तर:- ये तो सर्वज्ञ भगवान की कही हुई वाणी है, समयसार में आयी है। आहाहा!

एक द्रव्य दूसरा द्रव्य का कुछ कर्ता-हर्ता नहीं है। दोनों का स्वचतुष्टय भिन्न-भिन्न है। अत्यंत-अभाव है। अत्यंत-अभाव है। दो द्रव्य के बीच में अत्यंत-अभाव होने से कर्ता-कर्म संबंध नहीं है। निमित्त-नैमित्तिक सम्बंध भी नहीं है और ज्ञाता-ज्ञेय संबंध भी नहीं है आहाहा! वहाँ तक जाना है। आहाहा!

श्वेतभाव स्वयंकृत, कृष्णरूप होता है। स्वयमेव किए गए कृष्णभावरूप होता है। इसी प्रकार जब वो ही ज्ञानी, वो ज्ञानी जब भोग भोगता था तब ज्ञानी रहा और भोग को छोड़ दिया तो अज्ञानी बन जाता है। भोग भोगता था तो ज्ञानी रहा और भोग का त्याग कर दिया था तो स्वयं अज्ञानी बन गया। तो उससे परपदार्थ को भोगता था तो ज्ञानी का अज्ञानी नहीं बना और परपदार्थ का भोग छोड़ दिया समझे? पहले गृहस्थ था समझो। पहले गृहस्थ था और गृहस्थ अवस्था में ब्रह्मचर्य की प्रतिज्ञा नहीं लिया था, ब्रह्मचर्य की प्रतिज्ञा भेदज्ञान करके ज्ञानी बन गया, समझ में कुछ आया की नहीं? ऐसा दृष्टांत देता हूँ कि ख्याल में आए। सम्यग्दृष्टि हो गया समझे। बाद में ब्रह्मचर्य की प्रतिज्ञा लिया, वैराग्य आ गया, समझे? ब्रह्मचर्य की प्रतिज्ञा लिया, स्त्री का भोग के टाइम सम्यग्दृष्टि और ब्रह्मचर्य के पालन करने लगा, स्त्री का संग नहीं करता, समझे? वो अपने स्वभाव को भूल गया तो मिथ्यादृष्टि हो जाता है। इसका प्रकरण ये चलता है कि परपदार्थ से अपने परिणाम में कोई फेरफ़ार नहीं होता है। तेरा परिणाम का फेरफ़ार तेरे वश है। बस। स्वयंकृत है। लिखा है की नहीं? आहाहा!

मुमुक्षु:- स्त्री कारण नहीं था।

उत्तर:- स्त्री कारण हो तो सम्यग्दर्शन टिके नहीं। सम्यग्दर्शन तो टिकता था और ब्रह्मचर्य पाला, अपने स्वभाव को छोड़ दिया, समझा? अज्ञानी हो गया। ऐसी बात है। कच्चा पारा है कच्चा पारा। संभल-संभलकर, पका-पकाकर खाना। ख्याल रखना ये स्वच्छंदी होने की बात नहीं है। और ब्रह्मचर्य का त्याग करना और अब्रह्मी बनना ऐसा उपदेश नहीं है। वो तो बात है ही नहीं।

मुमुक्षु:- वो तो अन्यमत में भी नहीं।

उत्तर:- नीचे उतरने की बात इधर है ही नहीं।

मुमुक्षु:- ये तो रहस्य है। सिद्धक्षेत्र में खुलता है, रहस्य।

उत्तर:- सिद्धक्षेत्र है। ऐसा दृष्टांत तो बहुत है। ऐसा दृष्टांत दिया छेल्ला (अंतिम) कि ख़याल में आ जाये कि परपदार्थ से बंध होता नहीं है। ये अपना भाव से बंध होता है और अपना भाव से मोक्ष। परिणाम से बंध और परिणाम से मोक्ष। अपना परिणाम से बंध होता है और अपना परिणाम से मोक्ष होता है। परपदार्थ का अपराध बिलकुल तेरे में लागू पड़ता नहीं है। परपदार्थ को क्यों दोष देता है? आहाहा!

इसी प्रकार जब वही ज्ञानी, वही ज्ञानी लेना। भोग भोगनेवाला ज्ञानी लेना। ज्ञानी दूसरा नहीं वो ही ज्ञानी जब भोग भोगता था तब वही ज्ञानी, ज्ञानी रहता था। **यही ज्ञानी परद्रव्य को भोगता हुआ अथवा न भोगता हुआ**, स्त्री का त्याग कर दिया, भोगता नहीं है, समझे? ये तो स्त्री का बड़ा दृष्टांत है बाकी पाँच इंद्रिय का विषय घटा लेना। सब (घटा) लगा लेना। **ज्ञान को छोड़कर** देखो, भोगता हुआ कि न भोगता हुआ परपदार्थ को छोड़ दिया, पाँच इंद्रिय के विषय को छोड़ दिया **ज्ञान को छोड़कर स्वयं अज्ञानरूप परिणमित होता है। तब उसका ज्ञान स्वयंकृत अज्ञान होता है।**

मुमुक्षु: स्वयंकृत

उत्तर: हाँ! परकृत नहीं है!

मुमुक्षु: अज्ञान स्वयंकृत है।

उत्तर: हाँ! अज्ञान स्वयंकृत और ज्ञान भी स्वयंकृत। ज्ञान भी परकृत नहीं और अज्ञान भी परकृत नहीं है।

सूक्ष्म बात तो ऐसी है कि ज्ञान भी स्वकृत नहीं है। ज्ञान अपनी योग्यता से, निरपेक्षता से देखो, जब उसका लक्ष्य ज्ञायक पर है, तो जीवकृत है ज्ञान, ऐसा कहा जाता है। बाक़ी तो है पर्यायकृत ज्ञान, द्रव्यकृत भी नहीं है तो निमित्तकृत तो कहाँ से आवे? ऐसी बात है! अलौकिक बात है। पर्याय सत्, अहेतुक है। पर्याय, द्रव्य सत्, गुण सत्, पर्याय सत् निरपेक्ष देखो। पर्याय को (निरपेक्ष देखो).

ऐसा आया, मेरा तो भाव आया, बिगड़ गया। केरी नहीं थी सामने, रस तो आया रस को देखा नहीं तो रस लेने की इच्छा हुई पाप भाव आया, तो रस नहीं देखूँ तो पाप नहीं होता था। ऐसा नहीं है। रस का सदभाव हो कि रस का अभाव हो, ये पाप पुण्य स्वयं होता है वो तो निमित्तमात्र है। स्वतंत्र सत् है। ज्ञान भी सत् और अज्ञान भी सत्। मिथ्यात्व भी सत् और सम्यग्दर्शन भी सत्। सम्यग्दर्शन नहीं होता था, मगर जब मेरे को ज्ञानी गुरु मिला, समजे, तो सम्यग्दर्शन हो गया। तेरे को सम्यग्दर्शन हुआ ही नहीं। गुरु से सम्यग्दर्शन होता है कि आत्मा स्वयंकृत है? हाँ! सम्यग्दर्शन होता है तब विनयभाव आता है, कि आपने सम्यग्दर्शन दिया, ऐसा विनय ज़रूर करता है। आता है उसको भाव, ये विनय का भाव है, मगर ये गुरुकृत सम्यग्दर्शन नहीं है। ये सम्यग्दर्शन आत्मकृत नहीं है। आत्मा दाता नहीं है तो गुरु दाता कहाँ से आ गया? वो तो व्यवहार का वचन है। तो व्यवहार का वचन को निश्चय का मानना, एकत्वबुद्धि हो जाती है। निमित्ताधीन दृष्टि हो गयी। आहाहा! भाई साहब ने सच्ची बात कही, गहरी बात है। थोड़ी गहराई की बात है। भाई साहब गहराई की बात है। ऊँचे-ऊँचे जाने की बात है, नीचे पड़ने की बात नहीं है। अन्यमत में नहीं है तो स्वमत में तो कहाँ से हो।

स्वयमेव अज्ञानरूप से प्रवर्तता है, उसका ज्ञान स्वयंकृत अज्ञान होता है। इसलिए ज्ञानी को

यदि बंध हो तो वह अपने ही, एव, अपने ही **अपराध के निमित्त से बंध होता है।** पर का कारण से बंध होता नहीं है। यानि ज्ञान छूटता है तो अपने कारण से छूट जाता है। आहा! दूसरे के कारण से नहीं छूटता है। आहाहा! यानि कि सम्यग्दर्शन हुआ बाद में एक करोड़ रूपये की लॉटरी लग गयी। समझे? सम्यग्दर्शन की भूमिका है। तो करोड़ रुपया आया तो सम्यग्दर्शन छूट गया, ऐसा नहीं है। उसके अंदर एकत्वबुद्धि कर लेता है तो सम्यग्दर्शन छूट गया है और दूसरा दस लाख रूपये की पार्टी हो, दस लाख रुपया पाप का उदय से चले जाये, सम्यग्दृष्टि, तो सम्यग्दर्शन चला नहीं जाता। पैसा गया तो ज्ञान गया ऐसा नहीं है। पैसा आया तो ज्ञान टिकता है, ऐसा नहीं है। परद्रव्यकृत नहीं है परिणाम। पर्यायकृत है। व्यवहार से जीवकृत है। निश्चय से पर्यायकृत है। और व्यवहार से जीवकृत कहा जाता है यानि ऐसा नहीं है उपचार से कहा जाता है।

मुमुक्षु:- जीव का सम्यग्दर्शन छूट गया तो व्यवहार से कहा जाता है?

उत्तर:- हाँ, सम्यग्दर्शन छूट गया तो छोड़ा ऐसा कहा जाता है। सचमुच तो छूटने का काल है तो छूटता है, आत्मा छोड़ता नहीं है। वो क्यों छोड़े? सम्यग्दर्शन को क्यों छोड़े आत्मा?

मुमुक्षु:- वो स्वयंकृत है।

उत्तर:- वो स्वयंकृत है। छूटता है स्वयं, उत्पन्न होता हैं स्वयं, टिकता भी है स्वयं और वृद्धि होती है वो भी स्वयं। आत्मा जो जाननहार है। आया-गया, आया टिका, वृद्धि हुआ, वो तो आत्मा को जानते-जानते परिणाम जणित जाता है बस। आत्मा का अधिकार जानने का है, करने का नहीं है। जानना मात्र है। आत्मा का स्वरूप जानो और स्वरूप जानते-जानते परिणाम भी जणित जाता है। करने का अधिकार आत्मा का नहीं है। आत्मा का अधिकार नहीं है और तू कहता है पर का दोष से मैं दोषित होता हूँ, आहाहा! दिल्ली बहुत दूर है। ये द्रव्यलिंगी की भूल होती है। हाँ... ऐसी बात है। इसलिए गुरुदेव कहते थे हमारे दुश्मन कोई द्रव्यलिंगी न हो। हमारा कोई दुश्मन हो तो द्रव्यलिंगी न होवे। सब को भावलिंग हो जाओ और सब परमात्मा हो जाओ, आहा! ऐसी बात है।

भावार्थ: जैसे श्वेत शंख पर के भक्षण से काला नहीं होता। पर से काला नहीं होता। **किंतु जब वह स्वयं ही काले भावरूप परिणमित होता है, तब काला हो जाता है। इसी प्रकार ज्ञानी पर के उपभोग से अज्ञानी नहीं होता। इसलिए** भोग का परवाना नहीं दिया। परमिट नहीं है भोगने की। मगर परपदार्थ को भोगने से तेरा ज्ञान नहीं छूटेगा। शंका मत करना। आहा! **जब स्वयं ही अज्ञानरूप परिणमित होता है तब अज्ञानी होता है और तब बंध करता है।** अभी एक श्लोक है। बढ़िया है।

१५१ श्लोक बोलो।

ज्ञानिन् कर्म न जातु कर्तुमुचितं किंचित्तथाप्युच्यते
भुंक्षे हंत न जातु मे यदि परं दुर्भक्त एवासि भो:।
बंध: स्यादुपभोगतो यदि न तत्किं कामचारोऽस्ति ते।
ज्ञानं सन्वस बंधमेष्यपरथा स्वस्यापराधाद् ध्रुवम्। १५१।।

अभी लाल बत्ती धरते (दिखाते) हैं। आचार्य भगवान ने ऐसा खुलासा किया ना परपदार्थ भोगने से बंध होता नहीं है ऐसा कोई उल्टा नहीं समझ जावे, इसलिए श्लोक बनाया टीकाकार ने।

हे ज्ञानी! हे ज्ञानी! सब उसको तो संसार का मालूम है ना, उल्टा पकड़ लेगा। मर्म तो समझेगा नहीं। आहाहा! हमारी अपेक्षा समझेगा नहीं कि कितनी मर्यादा में ये कथन है। हैं? समझेगा नहीं तो मर जायेगा।

हे ज्ञानी! तुझे कभी कोई भी कर्म करना उचित नहीं है। कोई भी करना कर्म उचित नहीं है। भोग का कर्म उचित नहीं है। उचित नहीं है, कोई भी कर्म। शुभ और अशुभ दोनों ही। कोई भी कर्म।

यदि तू यह कहे कि "परद्रव्य मेरा कभी भी नहीं है। परद्रव्य मेरा कभी भी नहीं है। **और मैं उसे भोगता हूँ"**। एक तो तू कहते है कि परद्रव्य मेरा नहीं है और उसको मैं भोगता हूँ। आहाहा! उल्टी-सुलटी बात है। नहीं है, तो तू कहाँ से भोगता है? और भोगता है तो मेरा है ऐसा करके भोगता है तो मिथ्यादृष्टि बन जायेगा।

मुमुक्षु:- दोनों तरफ़ से बात की।

उत्तर:- दोनों तरफ़ से बात किया। बता दिया। आहाहा! **तो तुझसे कहा जाता है** मैं पूछता हूँ एक दफे तूने कहा परद्रव्य का भोग करने से बंध नहीं होता है। मैंने सुना और कहता है कि परद्रव्य मेरा नहीं है तो भी मैं परद्रव्य का भोगता हूँ। ऐसा दलील किया अज्ञानी ने उसके सामने लाल-बत्ती धरके, समझे?

तो तुझसे कहा जाता है कि हे भाई! तू ख़राब प्रकार से भोगनेवाला है, यानि परपदार्थ है ऐसा जानता है और मैं उसका भोगनेवाला हूँ वो तेरी बात ठीक नहीं है, न्याय-संगत नहीं बैठती है। **जो तेरा नहीं है** खुलासा करते है। तू कहता है ये पदार्थ मेरा नहीं है और मैं उसको भोगता हूँ। लड्डू मेरा नहीं है, लड्डू को मैं भोगता हूँ। स्त्री मेरी नहीं है मैं उसको भोगता हूँ, स्पर्श, रस, गंध, वर्ण मेरा नहीं है परद्रव्य है, मैं उसको भोगता हूँ। तो तेरी बुद्धी मिथ्या है। आहाहा!

मुमुक्षु:- मेरी नहीं है और मैं उसका भोगता हूँ।

उत्तर:- **जो तेरा नहीं है उसे तू भोगता है, यह महा खेद की बात है**। आहाहा! जो तेरी वस्तु नहीं है तू बोलता है मैं उसका भोगता हूँ, तो वो बात खेद की है। आहाहा! तो सचमुच यह परद्रव्य है माना ही नहीं। स्वद्रव्य मानकर भोगता है।

मुमुक्षु:- परद्रव्य माने तो भोगे ही नहीं।

उत्तर:- परद्रव्य माने तो भोगता की बुद्धि रहती ही नहीं है। भोगता बनता है मगर भोगता की बुद्धी नहीं रहती है, क्या कहा?

मुमुक्षु:- यानि दूसरा, दूसरे को भोगता है।

उत्तर:- ऐसा ही है। एकताबुद्धी नहीं है।

मुमुक्षु:- भाई! बहुत मार्मिक है। माल भरा है।

उत्तर:- **जो तेरा नहीं है, उसे तू भोगता है - यह महाखेद की बात है। यदि तू कहे कि**, उसकी तरफ़ से दलीलें करते है आचार्य महाराज! "**सिद्धांत में यह कहा है कि परद्रव्य के उपभोग से**, भोग और उपभोग। एक दफे भोगना, उसका नाम भोग। उपभोग यानि बारंबार भोगना। एकबार रोटी खाना भोग, बारंबार रोटी खाना उपभोग, समझे? तो **परद्रव्य के उपभोग से बंध नहीं होता है इसलिए भोगता हूँ"**। आहाहा!

आपने कहा कि परद्रव्य के भोग से बंध नहीं होता है इसलिए मैं परद्रव्य को भोगता हूँ। हाँ! अज्ञानी की दलील है। आपने कहा परद्रव्य का भोग से बंध होता नहीं है। वो बात मेरे को बैठ गयी। समझे? तो मैं परद्रव्य को भोगता हूँ क्योंकि बंध नहीं है।

मुमुक्षु:- आप ही ने तो कहा था।

उत्तर:- हाँ! आप ही ने कहा था अभी बोला अभी फोक! आपने कहा था परद्रव्य का भोग से बंध होता नहीं और अभी समयसार शास्त्र बदला नहीं। अधिकार निर्जरा का रखा। स्याही सूखी नहीं अभी तक ऊपर की, स्याही सूखी नहीं, गिली है और आप कहते है आपको सब छूट और हमको बंधन? ये तो पक्षपात है, ज्ञानी को अज्ञानी कहते है। आप भोगे तो निर्जरा और हम भोगे तो बंध? कि ज्ञानी भोगता ही नहीं है। भोगता नहीं है जानता है आहाहा! एकत्वबुद्धी से भोगता नहीं है। इच्छापूर्वक भोगता नहीं है। आहाहा!अनिच्छकभाव है। आहा! अंदर की बात रमत है भैया। अंदर की रमत है, बाहर की रमत नहीं है।

यदि तू कहे ("सिद्धांत में यह कहा है कि) परद्रव्य के उपभोग से बंध नहीं होता, इसलिए भोगता हूँ" आपने कहा था ना अभी? परद्रव्य के भोग से बंध नहीं है, अपने अपराध से बंध होता है।

आपने कहा तो मैं तो चालू कर दिया भोग। कल तक तो थोड़ा मर्यादा में रहा था, अब तो आलू खाने लगा, प्याज़ खाने लगा, माँस खाने लगा, क्योंकि परद्रव्य के भोग से बंध नहीं होता। मर जायेगा, आहाहा! नरक, निगोद में चला जायेगा। ऐसी बात नहीं है। आहाहा! **तो क्या तुझे भोगने की इच्छा है?** परद्रव्य है ऐसा मानता है, जानता है और उसको मैं भोगता हूँ। तो मैं पूछता हूँ कि इच्छा है कि अनिच्छा है, भोग की? बोल! भोग की इच्छा से भोगता है कि भोग की इच्छा न हो तो भोगता है।

मुमुक्षु:- इच्छा है।

उत्तर:- इच्छा है तो अज्ञानमयी इच्छा हो गयी। इच्छा का दो प्रकार १) अज्ञानमयी इच्छा २) अस्थिरता की इच्छा। इच्छा का दो प्रकार है। एक इच्छा मिथ्यात्व के साथ मैं है और एक इच्छा मिथ्यात्व जाने के बाद की इच्छा है। सम्यग्दर्शन के साथ। अज्ञान में इच्छा अलग बात है और अस्थिरता की इच्छा अलग बात है।

ये difference (भिन्नता) कैसे ख्याल में आवे? कि एक दफे अनुभव कर ले तो ख्याल में आवे। अनुभवी की बात अनुभवी जाने अज्ञानी जान सकते नहीं है। आहाहा! **तो क्या तुझे भोगने की इच्छा है?**

तू ज्ञानरूप होकर निवास कर, भोगने की इच्छा छोड़ दे, ज्ञानरूप होकर, ज्ञान में निवास कर। **अन्यथा यदि भोगने की इच्छा करेगा, अज्ञानरूप परिणमित होगा। तो तू निश्चयत: अपने अपराध से बंध को प्राप्त होगा।** अपने अपराध से बंध होगा परद्रव्य से नहीं। वो उसके बाद लाल लाइन लगा दिया बाद में भी लगा दिया। कि अपने अपराध से, अपनी इच्छा से बंध होता है। मोक्ष से बंध होता नहीं है। इच्छा यानि एकत्वबुद्धी, अस्थिरता की इच्छा अलग बात और निर्जरा का कारण है। एकत्वबुद्धी अज्ञानमय इच्छा बंध का कारण है।

भावार्थ:- **ज्ञानी को कर्म करना उचित ही नहीं है।** कोई भी कर्म, कोई भी इच्छा, कोई भी विकल्प, कोई भी राग उत्पन्न करना योग्य नहीं है। **यदि परद्रव्य जानकर भी उसे भोगे तो योग्य नहीं है।** आहाहा! वो जिसको परद्रव्य जानता है, उसको भोगता ही नहीं है। काहे को भोगे? आहा! वो तो

आनंद को भोगता रहता हैं, परद्रव्य को भोगता नहीं है। **परद्रव्य के भोगता को जगत में चोर कहा जाता है** देखो! आहाहा! परद्रव्य मेरा है और मैं उसको भोगता हूँ वह चोर है। **अन्यायी कहा जाता है। और जो भोग से बंध नहीं कहा सो तो ज्ञानी इच्छा के बिना ही**, आहाहा! भोगने की इच्छा के बिना ही भोगा जाता है। अज्ञानमय इच्छा नहीं, ये इच्छा बलात्कार से आती है। बलात्कार से आती है ये इच्छा। इच्छा करने का भाव नहीं है मगर योग्यता है तो इच्छा उत्पन्न हो जाती है। इच्छा की इच्छा नहीं है। इच्छा है मगर इच्छा की इच्छा नहीं है। ये इच्छा आवे तो ठीक है ऐसा होता नहीं है। भोग की इच्छा का नाम वो पाप जानता है ज्ञानी। आहा! मगर क्या है वो जो पाप की इच्छा होती है उसको टालने को निर्विकल्प ध्यान में जाकर टालना चाहिए। समझ में आया?

निर्विकल्प ध्यान में जाने से इच्छा बंद हो जाती है। उत्पन्न नहीं होती, मगर ऐसा निर्विकल्प ध्यान आता नहीं है और बार-बार वो इच्छा से आकुलित हो जाता है। कुदरती दो-चार दिन निरंतर ऐसा विचार आया कि लाडू खाऊँ, लाडू खाऊँ, चूरमा का लाडू समझे? चूरमा का लाडू बनता है ना आपके यहाँ! दाल-बाटी खाऊँ, दाल-बाटी खाऊँ, ऐसा समझो। दो दिन, तीन दिन, चार दिन हुआ। समझे? इच्छा टलती नहीं है। उपयोग अंदर में जाता ही नहीं है। बेटी को बुलाया, बेटा! तेरी मम्मी को बोल आज दाल-बाटी खाना है। दाल बाटी खाया, इच्छा खतम हो गई।

या तो आत्मा का अनुभव से इच्छा टलती है। नहितर उसका संगसे इच्छा टल जाति है।

तथा प्रकार की इच्छा। ये सब अंदर की बात है। एक दफे गुरुदेव ने कहा कि ज्ञानी की बात तो ज्ञानी ही जानता है। अज्ञानी जानता नहीं है। कभी कोई दफे इच्छा ऐसी हो गई ज्ञानी को। गुणस्थान के योग्य ही होती है। अयोग्य होती नहीं है। अयोग्यभाव नहीं आता है भाव। योग्य होती है। गुणस्थान के योग्य। चौथे, चौथे, पाँचवें, पाँचवे। गुरुदेव ने कहा कि इच्छा होवे तो वो पदार्थ को भोगवे, स्पर्श, रस, गंध, वर्ण कोई भी समझे? भोग किया छूट जाता है इच्छा। तो एक भाई बैठे थे समझे? तो साहब इच्छा का व्यय होना है तो भोग से व्यय करे वो तो लाइन बराबर नहीं है। आत्मा में निर्विकल्प हो जाये तो तथा प्रकार की इच्छा क्षय हो जाये। तो कहे वो ज्ञानी, अज्ञानी को खबर ही नहीं पड़ता है। समझे आप? ये आपका काम नहीं है, तुम्हारा काम नहीं है। ज्ञानी की बात ज्ञानी जाने। आहाहा! कोई आलौकिक रहस्य है, अंदर का रहस्य है। सम्भाल-सम्भालकर ये हज़म करने की बात है। नहीं तो ख़राब परिणाम आएगा। स्वच्छंद नहीं करना, कि भोग से निर्जरा होती है। ऐसा नहीं है।

सम्यग्दर्शन की महिमा बताना है। भेदज्ञान की महिमा बताना है। **ज्ञानी की इच्छा के बिना ही पर की ज़बरदस्ती से उदय में आए हुए को भोगता है।** ज़बरदस्ती मेने बलात्कार कहा ना? ज़बरदस्ती इच्छा आती है। इच्छा को रोक सकता नहीं है। ज़बरदस्ती परिणाम उत्पाद होता है उसकी योग्यता से। आत्मा का अधिकार नहीं है उसको रोके, आहाहा!

वहा उसे बंध नहीं कहा। यदि स्वयं इच्छा से भोगे, इच्छा बिना भोगे, इच्छा से ही भोगे **तब तो स्वयं अपराधी हुआ और तब उसे बंध क्यों न हों**? यानि बंध होता है।

इच्छापूर्वक का और इच्छा रहित कार्य। इच्छा एक तो अज्ञानमय इच्छा होती है, एकत्वबुद्धि की इच्छा और एक अस्थिरता की इच्छा होती है।

मुमुक्षु:- अस्थिरता की इच्छा? ज़बरदस्ती।

उत्तर:- चारित्र का दोष है।

मुमुक्षु:- चक्रवर्ती है वो ६ खंड का भोग कर रहा है बिना इच्छा। लड़ाई?

उत्तर:- लड़ायी करता बिना इच्छा की। इच्छा नहीं है। लड़ाई होती है। लड़ाई करता नहीं है। लड़ाई होती है उसको जानता है। सचमुच तो उसको जानते हुए आत्मा को ही जानता है।

मुमुक्षु:- इसलिए तो ज्ञानी है।

उत्तर:- ज़रा समझने की ये गाथा है। उल्टा-सुलटा नहीं समझना। आहाहा!

हो गया टाइम।

ॐ